ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-2* Issue-11* December- 2017
Innovation The Research Concept

समकालीन हिन्दी कविता में मुक्तिबोध की सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना

विजयता कुमारी राम
सहायक आचार्या,
हिन्दी विभाग,
पी0एन0दास एकेडमी,
बर्नपुर,पश्चिम बंगाल

सारांश

समकालीन कविता जीवन की समसामयिक अनुभूतियों की मार्मिक अभिव्यक्ति है। समकालीन कविता का साहित्य में अति महत्वपूर्ण स्थान है। इन कविताओं में साहित्य का प्राणत्व, मानवीयता अपने प्रखर रूप में विद्यमान है। समकालीन कविता के प्रमुख हस्ताक्षर है गजानंद माधव मुक्तिबोध। वर्ष 2017 गजानंद माधव मुक्तिबोध की जन्मशताब्दी के अवसर पर जनचेतना में जीवित रहने वाले इस कवि की याद को ताजा करती है। मुक्तिबोध ने भारतीय राजनीतिक एवं सामाजिक दुर्व्यव्था का अद्भुत मार्मिक चित्र प्रस्तुत करते है। मुक्तिबोध मूलतः और प्रथमतः कवि थे जिन्होने समय और समाज को लेकर अपनी बुनियादी चिंता को कविता के माध्यम से वाणी दी। उनकी कविता ऐसी 'वर्कशॉप क्रिटिसिज्म' है जिसके माध्यम से रचना रचते हुए और उस पर तथा उसकी परम्परा पर विचार करते हुए सामाजिक जीवन को लगातार केन्द्र में रखने की कोशिश की है। मुक्तिबोध के अनुसार साहित्यकार कलाकार अपनी विद्यायक कल्पना द्वारा जीवन की पुनर्रचना करता है जीवन की यह पुनर्रचना कलाकृति बनती है और यह कलाकृति सामाजिक एवं राजनीतिक सुव्यवस्था बनाने में अपना योगदान प्रदान करती हे।

मुख्य शब्द : अचेतन, भ्रष्टाचार, आत्मबोध, वर्कशॉप क्रिटिसिज्म।

प्रस्तावना

तर्क और संवेदना की सम्मिलित भूमि में जब कविता अपने समय का आकलन करने की एक जीवन दृष्टि प्रदान करने लगी तो सन् 1960 के बाद इस कविता को कई प्रमुख नाम दिये गए –सोठोत्तरी कविता, समकालीन कविता, अकविता अभिनव कविता, युयुत्सावादी कविता, बीट कविता, अस्वीकृत कविता, अति कविता, सहज कविता, निर्दिशयामी कविता आदि।

समकालीन कविता में असंतोष, निराशा, कुंठा, कड़वाहट, अस्वीकृति और विद्रोह का स्वर मुखर होकर सामने आया है यह स्वर कहीं व्यंग्य–रूप में तो कहीं स्पष्टता खुले रूप में जीवन की प्रमाणिक अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करती है जो जीवन की वास्तविकताओं, भारतीय समाज में व्याप्त जड़ता, विसंगति, आक्रोश, विडम्बना, मानव की स्वार्थपरता, अधिकार लोलुपता, भ्रष्टाचारिता के साक्षात्कृत परिवेश को स्वरूप प्रदान करते हुए कविता को रोमानी छायावादी संस्कारों से पूर्णतः मुक्त करती है। ''इसका प्रवर्तन डा० विशम्भरनाथ उपाध्याय ने सन् 1976 में अपनी पुस्तक 'समकालीन कविता की भूमिका' के माध्यम से किया।''[1] समकालीन कविता के स्वरूप का विश्लेषण करते हुए डा० उपाध्याय ने समकालीन गत्यात्मक एवं क्रियाशीलता से संबंध करते हुए कहा है '' समकालीन कविता में जो हो रहा है (बिकमिंग) का सीधा खुलासा है, इसे पढ़कर वर्तमान काल का बोध हो सकता है क्योंकि उसमें जीते, संघर्ष करते, लड़ते, बौखलाते, तड़पते–गरजते तथा ठोकर खाकर सोचते वास्तविक आदमी का परिदृश्य है। आज की कविता में काल, अपने गत्यात्मक रूप में है, ठहरे हुए क्षण या क्षणांश के रूप में नही। यह 'कालक्षण' की कविता नही, कालप्रवाह की आधात और विस्फोट की कविता है। समकालीन कविता में असंतोष, रोष एवं विद्रोह का विस्फोट है, इसलिए उसमें से अनुपात अवयव संतुलन, सामरस्य, क्लासिकपूर्णता, परिस्कृति आदि नही है। उनमें मुक्तिबोधक चट्टाने, अंधड़, लूटपाट, सिंहगर्जन उपहास, व्यंग्य लताड़ और मारधाड़ है। उसमें काल का होता हुआ रूप है, जीवन और मूल्यों की अमूत धारणाओं के स्थान पर सताए हुए लोगों का विवेचन और विद्रोह है।''[2]

समकालीन कवियों में निराला को समकालीनता के पूर्वाभास रूप में देखते हुए नागार्जुन की जनवादी चेतना विकसित होते हुए मुक्तिबोध के अभिव्यक्ति के खतरे उठाते हुए एकांत श्रीवास्तव तक आती है। इस श्रेणी में विश्वनाथ तिवारी, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा, दुधनाथ सिंह, धूमिल, लीलाधर जगूंड़ी, वेणु गोपाल, मत्स्येन्द्र शुक्ल, विष्णु खरे, देवेन्द्र कुमार, श्याम विमल, विजय कुमार, परमानन्द श्रीवास्तव, आलोक धन्वा, अमरजीत प्रताप सहगल, अरूण कमल, अनिल जोशी आदि कवि आते है।

समकालीन साहित्य की कविता में मुक्तिबोध की उपस्थिति अपना एक केन्द्रीय महत्व रखती है। मुक्तिबोध ने रचना और विचार के सन्दर्भ में एक नयें संवाद की शुरूवात करते हुए नये सवालों को उठाते हुए अपने सर्जनात्मक प्रतिभा का दिव्यदर्शन कराती है। मुक्तिबोध विचार के स्तर पर भारतीय इतिहास के महत्वपूर्ण प्रश्न से मुठभेड़ करते हुए अपनें समय के द्वन्दो के नतीजे के ओर पाठकों का ध्यान एकाग्र करते है। मुक्तिबोध एक ऐसे सजग कवि है जो रचना के माध्यम से भारतीय मनुष्य की यातना को उसकी समग्रता में मार्मिकता से परिभाषित करते है क्योंकि उन्होने रचना के साथ निरंतर रचना संबंधी चिंतन भी किया। मुक्तिबोध में भारतीय मध्यवर्ग के और खास कर निम्नमध्यमवर्ग के भौतिक और आध्यात्मिक संशय को, उसकी असक्ति और अंधकार को कविता में अभिव्यक्ति दी है।

गजानन माधव मुक्तिबोध 'तारसप्तक' के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर है। '' इनका जन्म (13 नवम्बर 1917 में) श्योपुर, ग्वालियर (मध्यप्रदेश) में हुआ था। प्रारंभिक शिक्षा उज्जैन में हुई। नागपुर विश्वविद्यालय से 1953 ई० में हिन्दी से एम० ए० किया। अध्यापन में विशेष रूचि होने के कारण राजनाद गाँव के दिग्विजय कॉलेज में बातौर अध्यापक कार्य किया। शारीरिक अस्वस्थता के कारण असमय (11 सितम्बर 1964 ई०) देहावसान हो गया ।''[3]

मुक्तिबोध की रचना प्रक्रिया को कोरी तार्काश्रित शुष्क और महज वादविवाद नहीं मानते है बल्कि एक संवेदनात्मक अन्तदृष्टि मानते है जिसमें लौकिक जीवन अनुभव से प्राप्त ज्ञान को रचनाकार अपने अंतर्जगत की संवेदना से समृद्ध कर सृजन जगत में प्रवृत होता है। उनकी संवेदन समाज के सामाजिक और राजनीतिक चेतना का सजगत होकर अवलाकन प्रस्तुत करती है। संवेदना महज भावोच्छावास नही होती है, मुक्तिबोध स्वयं अपने शब्दो में कहते हैं ''सच्चा आभ्यंतरीकरण (अन्तजर्गत से तादातम्य) तो तब होता है, जबकि लेखक जिंदगी में गहरा हिस्सा लेते हुए संवेदनात्मक जीवन ज्ञान प्राप्त करके उसी भाव–दृष्टि तक स्वंय अपने आप पहुँचता है कि भाव दृष्टि आग्रह रूप में बाहर से उपस्थित की गयी हैं । ''मानव चेतना वस्तुतः मानव संबंधो से निर्मित तथा उससे उद्‌गत चेतना है चेतना के तत्व बदलते ही उसकी अभिव्यक्ति भी बदल जाती है। ''[4]

मनन चिंतन और आग्रह अनुरोधो की दृष्टि से मुक्तिबोध एक प्रतिबद्ध और पक्षधर कालकार चिंतक के रूप में हमारे समक्ष आते है उनकी वास्तविक प्रतिबद्धता शोषित उत्पीड़ित विश्व जनता के उद्धार के महान लक्ष्य से संलग्न एक अति व्यापक आधारशिला ग्रहण करती है –

मेरे मित्र
कुहरित गत युगों के अपरिभाषित
सिंधु में डुबी
परस्पर जो कि मानव पुण्य धारा है
उसी के क्षुब्ध काले बादलों को साथ लायी हूँ
उड़ेगे खंड
बिखरेंगे गहन ब्राह्मंड में सर्वत्र
उनके नाश में तुम योग दो। ''

मुक्तिबोध की कविताओं में जीवन के प्रति व्यापाक दृष्टिकोण, स्वस्थ्य सामाजिक चेतना एवं लोकमंगल की भावना दृष्टिगोचर होती है। मुक्तिबोध ने समूचे जीवन को गम्भीरतापूर्वक देखा और परखा। अपनी कथनी के अनुरूप ही मुक्तिबोध ने अपना समूचा जीवन जिया। ''पूँजीवादी समाज के प्रति'' कविता में मुक्तिबोध लिखते है –

इतने प्राण, इतने हाथ, इतनी बुद्धि,
इतना ज्ञान, संस्कृति और अंतःशुद्धि,
इतना दिव्य, इतना भव्य, इतनी शक्ति
यह सौन्दर्य, वह वैचित्रय, ईश्वर भक्ति
इतना काव्य, इतने शब्द, इतने छन्द
जितना ढोंग, जितना भोग निर्बंध
इतना गूढ़, इतना गाढ़, सुन्दर–जाल
केवल एक जलता सत्य देने टाल।
छोड़ो हाय, केवल घृणा और दुर्गन्ध
तेरी रेश्मी वह शब्द संस्कृति अंध
देती क्रोध मुझको, खुब जलता क्रोध
तेरे रक्त में भी सत्य का अपराध।

इनकी पंक्तियाँ एक साहित्यकार के समाज के प्रति दायित्वबोध को दर्शाती है। मुक्तिबोध अपनी कविता ' ब्रह्मराक्षस ' की अंतिम पंक्तियों में लिखते है –

'' मै ब्रह्मंराक्षस का सजल डर शिष्य
होना चाहता
जिससे कि उसका वह अधूरा कार्य
उसकी वेदना का स्त्रोत
संगत, पूर्ण निष्कर्षो तलक
पहुँच सकूँ। ''

मुक्तिबोध का समाज के प्रति जो तड़प है उसी के कारण समाज सुधार या मानव कल्याण के कार्यों को पूर्ण करने के लिए वे ब्रह्मराक्षस बनना चाहते है। मुक्तिबोध की लेखन शैली पर टॉलस्टॉय और मार्क्स का प्रभाव हैं। उनका रचनासंसार भाव और बुद्धि का साझा अध्ययन है। मुक्तिबोध की कविता का जीवन संघर्ष उनके नीजी जीवन के संघर्ष का प्रतिफलन है। जीवन के संघर्षों को वे हिमालय की तरह झेलते हुए सामाजिक–राजनीतिक दुरभिसन्धियों और पारिवारिक आर्थिक संकट के बीच जीवन के अन्त समय तक अपराजेय व्यक्तित्व के साथ कविता में उपस्थित है। मुक्तिबोध वास्तिविक जीवन का चित्रण करते है व्यक्तिवाद का विरोध करते है, मिसफिट नही होना चाहते और न खुदकुशी करना सही मानते है।

इसलिए मार्क्सवादी विचारधारा के पास जाने के अतिरिक्त कोई विकल्प नही बचता उनके पास। यानि वे सामाजिक सरोकारों से जुड़े मुद्दो के लिए संघर्षरत रहते हुए ऐसी व्यवस्था के प्रति संशाकित हो उठता है। वह अभिव्यक्ति को औजार बनाकर फौसीवाद ताकतों का पर्दाफास करते हुए, सारे खतरे उठाने को तत्पर होते है।

'' अब अभिव्यक्ति के सारे खतरे
उठाने ही होंगे।
तोड़ने ही होंगे मठ और गढ़ सब। ''

इस पंक्तियों के माध्यम से ज्ञात होता है कि अपनी चिंतनात्मक के कारण मुक्तिबोध प्रगतिशील लक्ष्य की ओर उद्यत थे।

अंधेरे में कविता में ' अंधेरे ' की स्थिति अत्यंत महत्वपूर्ण है, मुक्तिबोध ' अंधेरे ' को एक विस्तृत केनवास देते है। अंधेरे के बिना पाठक कविता की मर्म तक नही पहूँच सकते थे। इसमें सामाजिक अव्यवस्था या कुव्यवस्था का अंधेरा तिलस्मी खोह का अंधेरा कवि मन में छायी अमूर्तता और अस्पृश्यता का अंधेरा संवेदना का अंधेरा, अचेतन का अंधेरा आदि अंधेरे के रूपों को देखा जा सकता है। इस कविता में अंधेरा एक ऐसा रूपाकार है जो सम्पूर्ण कविता को एक विसंगति में ढाल देता है और साथ ही न समाप्त होने वाली प्रक्रिया की ओर संकेत करता है। इसी कविता में अंधेरे की भूमिका दो स्तरो पर उपलब्ध है पहले स्तर पर यह '' अंधेरा '' सामाजिक अव्यवस्था और व्यक्तिमन की असंमजस को दिखाता है तो दूसरे स्तर पर यह ' अंधेरा ' रहस्यमय एवं भयावह वातावरण निर्माण करता है जिसमें कवि इच्छित वस्तुओं को सम्पूर्ण मूर्त रूप से उभारने में सफल हुआ है। शमशेर बहादूर सिंह इस कविता के संदर्भ में लिखा है – "यह कविता देश के आधुनिक जन इतिहास का स्वतंत्रता पूर्व और पश्चात का एक दहकता इस्पाती दस्तावेज है ....अंधेरे में मुक्तिबोध की एक ऐसी कविता है जिसमें उनकी काव्यात्मक शक्ति के अनेक तत्व धुल मिलकर एक महान रचना की सृष्टि करते है जो रोमानी होते हुए भी अत्याधिक यथार्थवादी और एकदम आधुनिक है। "[5] जिसमें सामाजिक एवं राजनीतिक संदर्भों की अभिव्यक्ति हैं। अंधेरे में कैद जीवन को बचाने के प्रतिबद्धता मुक्तिबोध अपनी अभिव्यक्ति की प्राथमिकताओं से शामिल करते है। फैंटेसी उनके काव्य की मुख्य विशिष्टता है यह फैंटेसी उनके यथार्थ में भोगे गए वास्तविक अनुभव की अभिव्यक्ति होने के साथ अवास्तविक कल्पना नही बल्कि अनुभवजन्य भावोलोक मानते है। कवि जीवनभर वर्गहीन शोषणयुक्त समाज के प्रति सचेत रहते हुए झण भंगुरता के स्थान पर जीवन की गतिशीलता निराशा के स्थान पर आशा, व्यष्टि चेतना के स्थान पर समष्टि चेतना के प्रति अपनी आस्था प्रकट करते हुए अन्यायमूलक पूँजीवादी व्यवस्था के प्रति आक्रोश प्रकट करते है –

'' इतना काव्य, इतने शब्द, इतने छंद
जितना ढोंग, जितना भोग है निर्बन्ध''

पूँजीवादी समाज के प्रति अंधेरे में कविता में कवि साम्राज्यवादी पूँजीवादी और फौसीवादी ताकतों की गाठ खोलते है जो मुक्तिबोध के भाव, इन्द्रिय बोध और विचारधारा का साझा आख्यान है कवि अंधेरे में समाज, राजनीतिक, साहित्यिक आदि विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े हुए लोगो के राक्षसी स्वार्थ को प्रत्यक्ष देख लेता है

गहन मृतात्माएँ इसी नगर की
हर रात जुलूस में चलती
परन्तु, दिन में,
बैठती है मिलकर करती हुई षडयंत्र
विभिन्न दफतरों, कार्यलयों, केन्द्रों में, घरों में
हाय हाय। मैने उन्हे देख लिया नंगा
इसकी मुझे और सजा मिलेगी।''

यह कविता सामाजिक भ्रष्टाचार का पर्दाफास करती हुई, मुक्तिबोध का राजनीतिक समझ को उजागर करती है इसीलिए नामवर सिंह कहते है कि '' मुक्तिबोध ' निराला' के बाद हिन्दी के सबसे बड़े कवि है और उनकी कविता 'अंधेरे में' नया इतिहास रचने वाली हमारे समय की सर्वाधिक मूल्यवान और महत्वपूर्ण कविता है। ''[6] अंधेरे में कविता समाज की विद्रूपताओं को परत–दर–परत खोलती जाती है। इस कविता में सामाजिक तत्वों के उपेक्षा की परिणति को दिखाया गया है मुक्तिबोध स्वयं कहते है – '' वैज्ञानिक मनोभवों के अंकन मात्र से कला महान नही होती, जब तक कि उसमें सामाजिक तत्व का आभाव हो.....मानवता के सब उच्च संस्कृति की ओर किये गये प्रयत्नों का मुख्य दोष सामाजिक तत्वों की अपेक्षाकृत उपेक्षा रहा है, जिस कारण विश्व प्रगति उतनी नही हो सकी जितनी कि होना चाहिए कला उतनी नही बढ़ सकी जितनी कि बढ़ना चाहिए थी विचार उतने ऊँचे और व्यापक नही हो सके जितने कि होने चाहिए थे। प्रगतिवाद उस मुख्य कारण को चीन्ह लेता है और कहता है कि जब तक सामाजिक न्याय नही होगा तब तक व्यक्ति के चिन्तन में हमेशा दोष उत्पन्न होते रहेंगे। सुसंगति और समस्वरता की निरन्तर चेष्टा करते रहने के बाद भी वह ठीक–ठाक अर्थ में आदर्श प्राप्त नही कर सकते जब तक वह समाज के प्रति स्वयं सुसंगत न हो ले।''[7] समाज एवं सामाजिक तत्वों के प्रति यह पड़ताल करते हुए मुक्तिबोध सामाजिक एवं राजनीतिक चेतना द्वारा समाज में समानता की मांग करती है जहाँ सभी खुलकर अपनी जिंदगी जी सके। मुक्तिबोध का शिल्प वैशिष्टय उनके इस कार्य में उनका पूर्ण सहयोगी बन कर समक्ष आता है इनकी कविताएँ मुख्यतः प्रतीकात्मक है। ओरांग उरांग, रावण, ब्रह्मराक्षस, पुणिधर, चम्बल की घाटी, अंधेरा आदि प्रतीक है– भयावह का। कहीं–कहीं पूरी कविता प्रतीकों मे ही कह दी गयी है। आत्मशोध और आत्मालोचन की प्रवृति मुक्तिबोध शैली में कैसी बसी हुई है यह चकमक की चिनगारियाँ कविता में देख सकते है–

कि मै अपनी अधूरी दीर्घ कविता में
उमंग कर जन्म लेना चाहता फिर से
कि व्यक्तित्वांतरित होकर
नये सिरे से समझना और जीना
चाहता हूँ सच।

वस्तुतः मुक्तिबोध ने समाज और राजनीति के सभी पहलुओं की स्पष्ट अभिव्यक्ति अपनी कविता में की है समकालीन कविता में उनका योगदान हिन्दी साहित्य

की बहुमूल्य नीधि हैं सुविख्यात समकालीन कवि अरूण होता कहते है –" महाप्राण निराला के बाद मुक्तिबोध ही ऐसे कवि है जिनका जीवन और कविता एक दूसरे से अविच्छेद है मुक्तिबोध की निजी व्यक्तित्व एवं कवि व्यक्तित्व परस्पर सम्बद्ध है।"[8] मुक्तिबोध की काव्य के अन्तर्वस्तु जितनी व्यापक है उससे भी ज्यादा गहरी है। अपनी रचनाओं के माध्यम से वे समाज जीवन और युग के जिस यथार्थ का साक्षात्कार करते है और जिसे अभिव्यक्ति करते है वह वस्तुतः जटिल और उलझा हुआ है।

अध्ययन का उद्देश्य

प्रस्तुत आलेख के माध्यम से समकालीन कविता के स्वरूप विवेचन के साथ कवि गजानंद माधव मुक्तिबोध की कविता के प्रसंगिकता पर विचार व्यक्त किया गया है। सामाजिक राजनीति संदर्भों पर मुक्तिबोध की कविता के माध्यम से प्रकाश डाला गया है। साथ ही समकालीन कविता में मुक्तिबोध के स्थान को बताने का प्रयास करना इस आलेख का उद्देश्य रहा है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः हम कह सकते है कि समकालीन कविता समसामयिक समाज के ज्वलंत मुद्दो को उठाती है। समकालीन कविता श्रेश्ट कवि गजानंन माधव मुक्तिबोध को साहित्य की सामाजिक तथा परिवर्तनकामी भूमिका में अगाध विष्वास होने के कारण ही उन्होने अपने जीवन को ही नहीं अपने सृजन के विराट लक्ष्यों की ओर अग्रसर होते सदा ही समाज की बेहतरी के लिए समर्पित भाव से साहित्य सृजन किया। एक बेहतर और सही दिशा में सजात निर्माण की चिन्ता मुक्तिबोध को जीवन भर रही। मुक्तिबोध का सम्पूर्ण साहित्य सत्ता–व्यवस्था के विरूद्ध औचित्यपूर्ण संघर्ष के साथ–साथ निरन्तर आत्मसंघर्ष और आत्मपरिष्कार की प्रक्रिया से गुजरता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *गणपति चन्द्र गुप्त – हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास (द्वितीय खण्ड) पृष्ठ– 306 लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद 211001 संस्करण – 2010*
2. *विश्वम्भरनाथ उपाध्याय– समकालीन कविता की भूमिका पृष्ठ 3–4 नई दिल्ली : मैकमिलन कंपनी ऑफ इंडिया संस्करण 1976*
3. *डा० कुसुम राय – हिन्दी साहित्य का वस्तुनिष्ठ इतिहास पृष्ठ 533 विश्वविद्यालय प्रकाशन संस्करण 2015*
4. *मुक्तिबोध रचनावली खण्ड 5 पृष्ठ 45 राजकमल प्रकाशन 2011*
5. *शमशेर बहादुर सिंह – चाँद का मुँह टेढा की भूमिका पृष्ठ 26*
6. *नामवर सिंह –मुक्तिबोध कमलकारों में और जनचेतना में जीवित है –वागर्थ (पत्रिका) फरवरी 2016– पृष्ठ 8*
7. *मुक्तिबोध : मुक्तिबोध संचयन : स० राजेश जोशी, वागर्थ फरवरी 2016 पृष्ठ 2*
8. *तद्भव पत्रिका – कविता का समकालीन प्रमेय, अक्टूबर अंक (1)*